भोपाल गैस कांड

संदर्भ और सवाल

ES1:4
PRI
431

भूमिका

भोपाल की गैस दुर्घटना हम सबके लिए चेतावनी है । श्रमिक कार्यकर्ताओं और चिंतनशील जनों के लिए आने वाले समय में इस मुद्दे को लेकर आवाज़ उठाना जरूरी है । यह पुस्तिका उसी दिशा में एक छोटा सा प्रयास है । इसके पहले भाग में भोपाल में **क्या हुआ** यह बताया गया है; दूसरे भाग में इस दुर्घटनाँ के कारणों पर चर्चा है – **ऐसा क्यों हुआ और आगे भी ऐसा क्यों हो सकता है?** और अंत में – **हम क्या कर सकते हैं ।**

आम मज़दूरों और लोगों के बीच सरल भाषा में प्रस्तुत यह संक्षिप्त पुस्तिका चर्चा एवं जागरूकता का एक छोटा सा माध्यम बन सकेगी, यही हमारी उम्मीद है ।

क्या हुआ

कयामत की रात

कला और संस्कृति के प्रमुख केन्द्र के रूप में विकसित हो रही मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल को आज विश्व की भीषणतम औद्योगिक दुर्घटना के संदर्भ में ही जाना जाता है ।

2/3 दिसम्बर 1984 की सर्द रात में, अभी पूरा शहर ठीक से सो भी न पाया था कि पुराने भोपाल पर दहशत का कोहरा छा गया । यूनियन कार्बाइड के कीटनाशक कारखाने से उठे विषैली गैसों के गुबार ने शहर के एक बड़े हिस्से पर मौत का शिकंजा कसना शुरू कर दिया । धर्म, जाति, रंग, आयु, लिंग के भेदभाव से परे सभी जीवधारियों पर गैस के विषाक्त असर ने रंग दिखाना शुरू कर दिया । सभी की आँखों में असह्य जलन की शिकायत होने लगी और सभी का दम घुटने लगा । गैस के सीधे सम्पर्क में आये लोगों ने तुरन्त दम तोड़ दिया । किसी की आँखों की रोशनी गायब होने लगी तो किसी को उल्टियों व दस्त का न रुकने वाला सिलसिला शुरू हो गया । दम घुटने के साथ-साथ किसी के मुँह से झाग निकलने लगा तो किसी की त्वचा विकृत होने लगी । किसी उपयुक्त चेतावनी व निर्देश के अभाव ने विपदा ग्रस्त निरीह जनों को विवेक शून्यता की स्थिति में ढकेल दिया । दिशाहीन जनसमूहों ने इधर-उधर भागना शुरू कर दिया । मृत व मृत्यु से जूझते सगे-सम्बंधियों व परिचितों का दुःख बँटाने के लिये रुकने का न किसी को होश था और न साहस ।

सूर्य की पहली दस्तक होने से पहले-पहले दसियों हजार लोग भाग कर भोपाल के आस-पास सेहोर, इटारसी, होशंगाबाद, अबदुल्लागंज, विदिशा आदि स्थानों पर पहुँच चुके थे और पुराना भोपाल सिर्फ, और सिर्फ, लाशों का शहर बचा था । चिकित्सा व्यवस्था, लोक प्रशासन व कानून व्यवस्था में बदहवासी ही बदहवासी व्याप्त थी । शाहजाँनाबाद, छन्बाद, ग्रीन पार्क, बेरासिया, पी. एण्ड टी. कालोनी, सिन्धी कालोनी, रामनगर, टीला जलालपुर, जयप्रकाश नगर, इब्राहिम कालोनी, शास्त्री नगर, छोला, काजी कैम्प, गाँधी नगर, तथा कोम्टा की बस्तियों में लाशें हटाने का काम युद्ध स्तर पर शुरु किया गया । शहर के सारे अस्पतालों में मरीजों की कतारें लगने लगीं । अकेले हमीदिया अस्पताल में 2.30 बजे रात तक 4,000 से ऊपर मरीज पहुँच गये थे । पुराने भोपाल में जगह-जगह सामूहिक चिताएँ जलने लगीं और सामूहिक कब्रें खुदने लगीं ।

भोपाल की जनता को यह दुःस्वप्न 'कयामत के दिन' या 'प्रलय' की धारणा से भी अधिक भयावह लगा । वस्तुतः यह भविष्य की कोख में छुपे रासायनिक युद्ध का एक छोटा पूर्वाभ्यास सा प्रतीत होता है जिसके सम्भावित परिणाम आज भी कल्पनातीत ही हैं । सारी बेजान चीजें यथावत थीं और जीवन पर पूर्ण विराम लग गया था ।

भीषण प्रभाव

यूँ तो दुनिया के इस सबसे बड़े औद्योगिक हादसे में हुई क्षति का अनुमान लगा सकना प्रायः असम्भव है क्योंकि इसमें प्रभाव बहुत दूरगामी हैं और उपलब्ध ज्ञान उसका कोई लेखा-जोखा नहीं रखता है । 2500 मृतक तो सरकारी हाथों से गुजरे हैं लेकिन स्थानीय लोगों के अनुमान से दस हजार से ऊपर

लोग काल के मुँह में समा चुके हैं और लगभग इतने ही प्रति क्षण मौत की ओर बढ़ रहे हैं । इसके अतिरिक्त बीस से तीस हजार तक लोगों की दृष्टि व कार्यक्षमता लगातार क्षीण हो रही है । विषाक्त गैसों के सम्पर्क में आये अन्य हजारों लोगों में घट रहे प्रभाव निकट भविष्य में ही प्रकट होने की सम्भावना है ।

पशुओं व वनस्पति की क्षति का अनुमान लगाना और भी मुश्किल है । लगभग 8 कि.मी. तक के क्षेत्र में सारे पशु या तो मर गये हैं या विकार ग्रस्त हैं । पेड़ पौधों की सारी पत्तियां गिर गयी हैं या मुरझा गयी हैं । पशुओं पर हुए इस भीषण प्रभाव ने सैकड़ों लोगों की आमदनी का जरिया भी नष्ट कर दिया है ।

क्या हुआ ?

यूनियन कार्बाइड का कीटनाशक कारखाना भोपाल शहर की उत्तर-पूर्व सीमा पर स्थित है । यह कारखाना भोपाल-इन्दौर रेलवे लाइन से एक दम सटा हुआ और भोपाल रेलवे स्टेशन से मात्र दो कि.मी. की दूरी पर स्थित है । जे.पी. नगर की झुग्गी-झोपड़ियाँ बिल्कुल कारखाने के साथ ही लगी हुई हैं और फिरदौस नगर, शाहजहाँनाबाद, सिंधी कालोनी, काज़ी कैम्प, कैंची छोला, निशातपुरा की बस्तियाँ भी इस कारखाने के तीन ओर डेढ़ कि.मी. के घेरे में बसी हुई हैं ।

2 दिसम्बर, 1984 की उस दुर्भाग्यपूर्ण रात को भोपाल का तापमान 12-14^0 से.ग्रे. था और 12 कि.मी. प्रति घन्टा की गति से मन्द हवा दक्षिण व दक्षिण पूर्व दिशा की ओर बह रही थी । इस वातावरण

में यूनियन कार्बाइड के कारखाने के अन्दर जो कुछ घटा वह अब तक की जानकारी के अनुसार इस प्रकार है :

* कारखाने के अर्ध-भूमिगत गैस भण्डारण टैंक में किन्ही अज्ञात रासायनिक प्रतिक्रियाओं के कारण टैंक के अन्दर तापमान तथा दबाव में तेजी से वृद्धि होने लगी ।
* वातानकूलन संयंत्र के बचत कार्यक्रम के अंतर्गत बन्द पड़े होने के कारण इसकी कोई सहायता न ली जा सकी ।
* भण्डारण टैंक से अधिक दबाव के कारण अकस्मात विषैली गैस निकलने की स्थिति में काम करने वाली प्रक्रिया प्रभावी होने से पूर्णतः विफल रही ।
* परिणाम स्वरूप विषाक्त गैस एक 8 इंच पाइप से होती हुई काफी ऊँचाई पर जाकर निकली और सफेद बादलों की तरह वातावरण में व्याप्त हो गई ।

यह विषाक्त गैस हवा की अपेक्षा भारी होने के कारण जमीन की सतह पर ही बैठती गयी । यहाँ तक की बिजली के खम्भों पर लगी लाइट पर भी धुन्ध सी छा गयी । लगभग 5 से 8 कि.मी. तक के क्षेत्र को इस गैस ने गम्भीरता पूर्वक प्रभावित किया किन्तु प्राप्त रिपोर्टों के अनुसार यह गैस कारखाने से 15 कि.मी. तक फैली तथा 50 वर्ग कि.मी. के क्षेत्र में रहने वाली शहर की एक चौथाई से अधिक (दो लाख) जन संख्या इस दुर्घटना की चपेट में आयी ।

भारत में यूनियन कार्बाइड

भारत से यूनियन कार्बाइड का रिश्ता बड़ा पुराना है । सन् 1905 में नेशनल कार्बन कम्पनी (इ.) लि. ने बैट्री के क्षेत्र में कारोबार आरम्भ किया और आगे चल कर यही कम्पनी यूनियन कार्बाइड बन गयी ।

* ब्रिटेन में तैयार सूखे सेल की एसम्बलिंग का कार्य 1924 में कलकत्ता में शुरू किया गया ।
* सन् 1940 में कलकत्ता में ही उत्पादन कार्य भी आरम्भ किया गया ।
* सन् 1952 में मद्रास में एक और फैक्टरी लगायी गयी ।
* सन् 1958 में फ्लैशलाइट प्लांट लखनऊ में लगाया गया ।
* सन् 1965 में एक आर्क कार्बन प्लांट कलकत्ता में स्थापित किया गया ।
* सन् 1967 में ड्राई सेल का ही एक और प्लांट हैदराबाद में स्थापित किया गया ।
* सन् 1969 में भोपाल में कीटनाशक फैक्टरी की स्थापना का कार्य आरम्भ हुआ ।
* सन् 1971 में एक इलेक्ट्रोलिटिक मैंगनीज डाई आक्साइड प्लांट बम्बई में लगाया गया ।

भारत में यूनियन कार्बाइड कम्पनी की सन् 1983 में कुल बिक्री 210 करोड़ रु. की हुई । इसका आधा हिस्सा बैटरी की बिक्री था । रसायन (जिसमें कीटनाशक भी शामिल है) की बिक्री समूचे की बीसवाँ भाग थी । सारे करों के भुगतान के बाद कम्पनी का सन् 1983 में मुनाफा लगभग 15 करोड़ रु. था ।

कारणों पर धुन्ध

इस दुर्घटना का दूसरा महत्वपूर्ण आयाम यह है कि इसके लिये जिम्मेदार परिस्थितियों पर लगातार कभी न हटने वाली धुन्ध छाई हुई है । शुरु दिन से प्रतिष्ठित राज-वैज्ञानिक सारे मसले को विषाक्त गैस के मिथाइल आइसो साइनेट या फास्जीन या दोनों के मिश्रण होने के विवाद में उलझा दिया । आगे चल कर प्रभावित जन संख्या के परीक्षणों ने दोनों ही विषाक्त गैसों की मौजूदगी की पुष्टि की । किन्तु उपलब्ध प्रमाणों के आधार पर वैज्ञानिकों की ऐसी मान्यता है कि मिथाइल आइसो साइनेट में स्वीकृत 0.02 – 0.05 प्रतिशत फास्जीन के स्थान पर उक्त गैस मिश्रण में फास्जीन की मात्रा सौ गुना अधिक थी । गैस के प्रभाव से मृत जानवरों के शव परीक्षणों में प्राप्त साइनाइड तत्व की मौजूदगी ने वैज्ञानिकों को दुविधा में डाल दिया है । क्योंकि रसायनशास्त्र के तर्क उक्त दोनों गैसों के तत्वों के साइनाइड में परिवर्तन की व्याख्या में असमर्थ हैं । मौजूदा लीपा-पोती की प्रक्रिया को देखते हुए नहीं लगता कि सम्बंधित यथार्थ निकट भविष्य में जनता के सम्मुख प्रकट हो सकेगा ।

ठीक इसी प्रकार यह अटकल भी लगाई जा रही है कि मिथाइल आइसो साइनेट के भण्डारण टैंकों में पानी रिसने के कारण ऐसी रासायनिक प्रक्रिया की शुरुआत हुई, जिससे भण्डारण टैंक का तापमान व दबाव असाधारण रूप से बढ़ गया । किन्तु पानी रिसने के कारणों तथा उसकी मात्रा के विषय में कोई जानकारी फैक्टरी के मालिक या प्रबंधकों के पास नहीं है । यहाँ तक कि टैंकों में पानी घुस जाने की पुष्टि करने वाले ठोस प्रमाण भी अब तक उभर के सामने नहीं आये हैं और न ही भविष्य में उनके प्रकट होने की कोई सम्भावना नजर आती है ।

भण्डारण टैंक में तापमान व दबाव की वृद्धि को जन्म देने वाली रासायनिक प्रक्रिया चाहे जो भी रही हो, इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि सारा दोष संयंत्र की आंतरिक गड़बड़ियों का ही था । संयंत्र की मूल डिजाइन, संयंत्रण, क्रियान्वन व रख-रखाव के दोषों के साथ-साथ यह दुर्घटना मिथाइल आइसो साइनेट की रसायनशास्त्रीय जानकारी के अभाव तथा पर्याप्त सुरक्षा प्रबंधों के अभाव के दोष को भी उजागर करती है ।

मरने और बुरी तरह प्रभावित होने वालों की सही संख्या अभी तक तय नहीं हो पाई है । कारखाने को लगाने और उसके बाद की जाँच-रिपोर्टों पर ताले लगे हुए हैं । वास्तविक स्थिति अभी तक सामने नहीं आई है ।

मिथाइल आइसो साइनेट क्या बला है ?

मिथाइल आइसो साइनेट (मिक) एक रंगहीन द्रव्य है । इसका इस्तेमाल कीटनाशक, दवाईयाँ, प्लास्टिक, युरिथेन झाग आदि बनाने में होता है ।

मिक हमारे शरीर में साँस और त्वचा के द्वारा प्रवेश कर सकती है ।

इस जहरीले पदार्थ के मामूली से सम्पर्क से आँख, नाक, फेफड़े आदि खराब हो सकते हैं और अधिक मात्रा में सम्पर्क से निश्चित मृत्यु ।

अमेरिका में इसकी सुरक्षित सीमा 2 कण प्रति दस करोड़ वायुकण मानी गई है ।

इसके जहर का कोई निदान नहीं है ।

और फास्जीन ?

फास्जीन एक रंगहीन गैस या द्रव्य है जिसमें गंध आती है । इसका प्रयोग कार्बानिक संयोजन, धातुओं के क्लोरीनीकरण, दवाईयों और रसायनों के उत्पादन में होता है

प्रथम महायुद्ध में इसके इस्तेमाल से हजारों सिपाही मारे गए और फिर दूसरे महायुद्ध में हिटलर ने इसका इस्तेमाल कर हजारों को मार डाला ।

यह विषैली गैस साँस के द्वारा शरीर में पहुँचती है, आँख, गले और फेफड़ों को प्रभावित करती है और इससे हृदयगति रुकने का खतरा रहता है ।

इसकी सुरक्षित सीमा 1 कण प्रति करोड़ वायुकण मानी गई है ।

आज तक इसके प्रभावों का कोई सही इलाज नहीं निकला है ।

पहले भी दुर्घटनाएँ हुई हैं

भोपाल के इस कारखाने में पहले भी अनेक दुर्घटनाएँ हो चुकी हैं:

* 24 नवम्बर, 1978 को कारखाने के नेपथाल भण्डार में भयानक आग लगी जिसे दस घंटे तक काबू नहीं किया जा सका था । इसमें करीब छः करोड़ रुपये की क्षति हुई ।
* 26 दिसम्बर, 1981 को प्लांट पर काम करते समय फासजीन गैस के रिसने से प्लांट आपरेटर मोहम्मद अशरफ मारा गया ।
* जनवरी, 1982 में एक बार पुनः फास्जीन रिसने से 28 लोग इस विषाक्त गैस का शिकार हो कर कई माह तक जिन्दगी और मौत के बीच जूझते रहे ।
* 22 अप्रैल, 1982 को कंट्रोल सिस्टम के विद्युत पटल पर काम करते समय तीन बिजली कर्मचारी जल कर बुरी तरह घायल हो गये ।

यूनियन कार्बाइड भोपाल की मजदूर यूनियन द्वारा सरकार को दी गई चेतावनियाँ

1. भारत सरकार के गृहमंत्री को यूनियन के अध्यक्ष द्वारा 17 अक्तूबर 1982 को दिए गए ज्ञापन में श्रमिकों की कुछ माँगें यह थीं:

1/ उद्योग की उत्पादन प्रक्रिया की उच्च स्तरीय जाँच निष्पक्ष विशेषज्ञों से करवा कर इससे श्रमिकों एवं उद्योग के आस-पास के जन जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करवाया जावे ।

2/ उद्योग में अक्सर होती रहने वाली भीषण दुर्घटनाओं की निष्पक्ष जाँच करवाई जावे ।

3/ उद्योग प्रबंधकों द्वारा किये जाने वाले श्रम अधिनियमों के उलंघन एवं श्रम संघों के कार्यकर्त्ताओं तथा श्रमिकों के दमन को अविलम्ब रुकवाया जावे ।

2. मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री को यूनियन के अध्यक्ष द्वारा 18 नवम्बर 1982 को दिए गए ज्ञापन के कुछ अंश:

"कुछ दिन पूर्व उद्योग में सुरक्षा सप्ताह मनाया गया, इसके दौरान उद्योग में दस दुर्घटनाएँ हुईं । इन घायलों को प्रबन्धकों की तरफ से कोई सुविधायें उपलब्ध नहीं करायी गईं । कारखाने में प्राणघातक सैंकड़ों रसायनों का प्रयोग असुरक्षित तरीकों से होता है । हाल ही में अभी एक श्रमिक क्लोरो साल्फोनिक एसिड से दुर्घटना ग्रस्त हुआ, जिससे उसका चेहरा विकृत हो गया । दिनांक 26 दिसम्बर को फास्जीन गैस के निकलने से अशरफ की मृत्यु हो चुकी है । उसके कुछ दिन उपरान्त 9 जनवरी 82 को लगभग 24 व्यक्ति फास्जीन गैस द्वारा मौत के मुँह से बचे ।

करीब रात के डेढ़ बजे 5 अक्तूबर 82 को एम.आई.सी. पाइप लाइन फट जाने से 3 व्यक्ति दुर्घटना ग्रस्त हुए, जिससे श्री वी. एन. अग्रवाल का उपचार करीब एक माह तक चला । दुर्घटना के कारण जयप्रकाश कालोनी, ग्रीन पार्क कालोनी, सन्त कंवर राम कालोनी के निवासी बुरी तरह प्रभावित हुए तथा अपनी जान बचाने के लिए छोला रोड एवं काजी कैंप की ओर सुविधा अनुसार भागे । फैक्टरी के समस्त कर्मचारी जो ड्यूटी पर थे वह लोग भी अपनी जान बचाने के लिए बाहर भागे । कारखाने के समीप रहने वाले आई. जी. जेल ने दुर्घटना की शिकायत पुलिस एवं नगर निगम फायर ब्रिगेड को की पर कार्बाइड के उच्च अधिकारियों ने फायर ब्रिगेड एवं पुलिस को किसी भी प्रकार की सूचना देने से मना कर दिया ।

14 अक्तूबर को कन्वेयर बेल्ट में हाथ आ जाने के कारण एक कर्मचारी शब्बू खां जख्मी हो गया, जो आज दिनांक तक हमीदिया अस्पताल में अपना उपचार करवा रहा है ।"

* 5/6 अक्तूबर, 1982 को मिथाइल आइसो साइनेट प्लांट पर काम कर रहे आपरेटर वाड़ेकर द्वारा वाल्व खोलते ही पाइप लाइनों को जोड़ने वाला फिलींज एक धमाके के साथ फूट पड़ा और जहरीला मिथाइल लावे की तरह उबल पड़ा । इस दुर्घटना में प्लांट के चार लोग बुरी तरह घायल हो गये और तमाम लोगों को भगदड़ के कारण शारीरिक चोटें आयीं । इस दुर्घटना का असर आस-पास की बस्तियों में भी महसूस किया गया और साँस लेने में पैदा तकलीफ व आँखों में जलन से खतरे का अहसास करते हुए लोग इधर-उधर भागने लगे ।

* 17 अक्तूबर, 1982 को यूनियन कार्बाइड एम्पलाइज यूनियन भोपाल ने भारत सरकार के गृह मंत्री को एक ज्ञापन दे कर संयंत्र की उत्पादन प्रक्रिया की उच्च स्तरीय निष्पक्ष जाँच करवा कर श्रमिकों व संयंत्र के आस-पास के जन जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करवाने की माँग की ।

* सन् 1983 में भी ऐसी ही दो और घटनाएँ घटने की सूचना है ।

भोपाल की इस फैक्टरी का इतिहास

भोपाल की कीटनाशक फैक्टरी का इतिहास सन् 1966-67 में यूनियन कार्बाइड (इण्डिया) लि. के कृषि उत्पादन विभाग की स्थापना के साथ जुड़ा हुआ है । इस विभाग का कार्यालय सन् 1968 में ही बम्बई से हटा कर भोपाल ले आया गया जहाँ इसने मिथाइल आइसो साइनेट पर आधारित कीटनाशकों को बनाने की फैक्टरी के निर्माण का कार्य आरम्भ किया ।

* सन् 1969 में भोपाल के बेरसिया रोड, काली परेड पर यूनियन कार्बाइड ने आयात की गई मिथाइल आइसो साइनेट पर आधारित कीटनाशक 'सेविन' (कार्बोरिल) के निर्माण के लिए संयंत्र लगाया ।

* सन् 1970 में यूनियन कार्बाइड (इं.) लि. ने विदेशी मुद्रा की बचत का हवाला देते हुए उत्पादन लाइसेन्स के लिए प्रार्थना पत्र दिया ।

* नवम्बर 13, सन् 1973 को यूनियन कार्बाइड (इं.) लि. और यूनियन कार्बाइड कारपोरेशन, अमेरिका के बीच एक समझौता हुआ । समझौते के तहत कम्पनी के अमेरिकी मुख्यालय द्वारा भारतीय शाखा को लगभग 20 करोड़ रु. लेकर उत्पादन हेतु आवश्यक मशीनें व तकनीकी जानकारी दिया जाना तय हुआ ।

* सन् 1973 में मिथाइल आइसो साइनेट की पहली किश्त अनुसंधान कार्यों के लिये अमेरिका से लायी गई ।

* अक्तूबर 31, 1975 यूनियन कार्बाइड (इं.) लि. को भारत सरकार के सार्वजनिक आपूर्ति तथा उद्योग मंत्रालय द्वारा 'सेविन' (कार्बोरियल) के उत्पादन के लिये लाइसेन्स प्राप्त हुआ (लाइसेन्स नं. सी/11/409/(73)) । रिजर्व बैंक आफ इण्डिया ने भी विदेशी मुद्रा नियमन अधिनियम, 1973 की धारा 29(2)(ए) के अंर्तगत यूनियन कार्बाइड (इं.) लि. को कार्य आरम्भ करने की अनुमति प्रदान कर दी ।

* सन् 1976 में 20 करोड़ रुपए की लागत से भोपाल में ही यूनियन कार्बाइड ने एक आधुनिकतम शोध और अनुसधान केन्द्र खोला। इस केन्द्र को सरकार ने आयकर से भी छूट दी। इस केंद्र में होने वाली शोध को अत्यंत गुप्त रखा जाता है। हाल ही में निकली एक रिपोर्ट के अनुसार इस शोध केंद्र पर कीटनाशक के बहाने जीवयुद्ध से संबंधित शोध होने का अंदेशा उठा है।

* सन् 1977 में कार्बोमाइजेशन यूनिट की स्थापना हुई तथा अमरिका से लायी गई मिथाइल आइसो साइनेट के जरिये 321 टन कीटनाशक का उत्पादन किया गया।

* सन् 1978 में अल्फा नेपथाल प्लांट की स्थापना हुई। लगभग दस करोड़ रु. की विदेशी मुद्रा के खर्च से लगा यह प्लांट महज एक धोखा है। 1978 से 1984 तक इस प्लांट में अल्फा नेपथाल का निर्माण नहीं हुआ और अब तक विदेशी मुद्रा खर्च कर कम्पनी द्वारा अपने अमेरिकी मुख्यालय से अल्फा नेपथाल आयात किया जाता है।

* दिसम्बर 1979/80 में मिथाइल आइसो साइनेट बनाने के प्लांट की स्थापना हुई।

* सन् 1981 में मिथाइल आइसो साइनेट पर आधारित कीटनाशकों का 2704 टन रिकार्ड उत्पादन हुआ जो घट कर सन् 1982 में 2308 टन तथा 1983 में 1657 टन रह गया।

* नवम्बर 18, 1982 को मुख्यमंत्री को स्थानीय यूनियन द्वारा दिये गये ज्ञापन में अन्य आरोपों के साथ उत्पादन बन्द कर दिये जाने तथा पिछले 6 माह से फैक्टरी में तैयार 600-700 टन कच्चा माल (मिथाइल आइसो साइनेट) आंध्रप्रदेश, राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र आदि भेजे जाने का भी आरोप लगाया गया। इस ज्ञापन में यह आरोप भी लगाया गया कि उक्त स्थानों पर ठेकेदारों के माध्यम से तैयार माल का उत्पादन किया जा रहा है और भोपाल स्थित फैक्टरी में श्रमिकों को निकालने व कारखाना बन्द करने की धमकी दी जा रही है।

अभी भोपाल की इस फैक्टरी में लगभग छह सौ नियमित और दो-तीन सौ ठेकेदारी के मजदूर हैं।

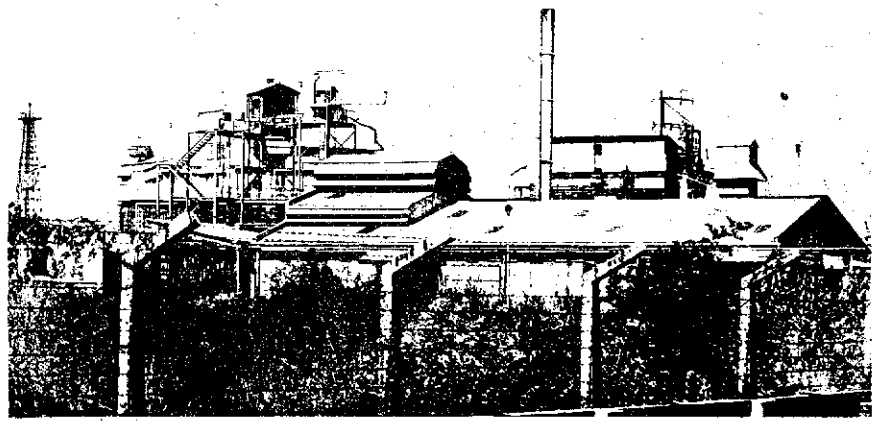

ऐसा क्यों हुआ ?

भोपाल की यह दुर्घटना अपने में अकेली नहीं है । देश में काफी अरसे से छुटपुट दुर्घटनाएँ हो रही हैं जिन पर कोई ध्यान नहीं दिया जाता रहा है । अनेक उद्योग ऐसे हैं जहाँ इस तरह का खतरा आज भी मौजूद है । ऐसी दुर्घटनाएँ कई जगह हो सकती हैं । इस दुर्घटना के असली कारणों को समझने के लिए हमें बहुराष्ट्रीय कम्पनियों और विश्व में चल रहे तकनीकी हस्तांतरण को भी समझना होगा । साथ ही साथ देश में चल रही कृषि विकास नीति और कीटनाशकों के इस्तेमाल के व्यापक संदर्भ को भी गहराई से देखना पड़ेगा ।

देश में ऐसी घटनाओं की अन्य मिसालें

भोपाल में होने वाली यह दुर्घटना अपने में अकेली नहीं है । इससे पहले भी देश में औद्योगिक गतिविधियों के चलते लोग मरे हैं और आज भी मर रहे हैं । उनमें से कुछ मिसालें:

* मंदसौर (मध्यप्रदेश) में स्लेट-पेंसिल उद्योग में हर महीने 13 श्रमिक सिलिका की घातक धूल के शिकार होते हैं और सैकड़ों बुरी तरह बीमार हैं ।
* शिवकाशी (तमिलनाडु) में माचिस बनाने वाले कारखानों में हर वर्ष सैकड़ों मजदूर (जिनमें बच्चे भी शामिल हैं) जिंदगी भर के लिए अपंग होते हैं और अनेकों मरते हैं ।
* बिल्डिंग निर्माण, ईंटों के भट्ठों और पत्थर आदि की खानों में काम करने वाले मजदूरों की आए दिन मृत्यु होती है ।
* 1977 में उत्तरप्रदेश के सीतापुर और लखीमपुर खेरी जिलों में 'गैमक्सीन' कीटनाशक के प्रदूषण से 58 लोग मर गए और ढाई सौ बीमार हो गए ।
* बम्बई स्थित सरकारी उद्योग राष्ट्रीय केमिकल और फर्टलाइजर लि. में 22 जुलाई 1982 को एक मजदूर नाइट्रिक एसिड के धुएँ से मर गया ।
* नागदा (मध्यप्रदेश) स्थित ग्वालियर रेयान के कारखाने में सिर्फ 1982 में ही 23 श्रमिकों की मृत्यु हुई ।
* कोचीन रिफाइनरी, अम्बालामुकाल में 8 मार्च 1984 को खनिज तेल के पदार्थों में जबरदस्त आग लगने से दो मरे और अनेकों घायल हुए ।
* दिल्ली के दिल्ली क्लाथ मिल कं. में 10 अप्रैल 1984 को क्लोरिन गैस के रिसन से तीन सौ मजदूर प्रभावित हुए ।
* 13 दिसम्बर 1984 को रायगढ़ जिले में थाल-वैशेट में अमोनिया गैस के रिसन से एक बच्चे की मृत्यु हुई और अनेकों लोग बुरी तरह प्रभावित हुए ।

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का मकड़जाल

औद्योगिक विकास के प्रारम्भिक चरण में व्यापारीगण नये बाजारों की खोज में लम्बी-लम्बी समुद्र यात्राएँ किया करते थे और सबसे पहले मार्ग खोज निकालने वाला बाजार हथिया लेता था । अपने बाजार पर स्थाई पकड़ बनाने के लिये औद्योगिक रूप से विकसित देशों ने अपने व्यापारियों द्वारा खोजे गये बाजारों को अपने उपनिवेषों में परिवर्तित कर दिया । बीसवीं शताब्दी के आरम्भ होने तक एक ओर तो बाजारों के विस्तार में ठहराव आने लगा और दूसरी ओर नए देश औद्योगिक प्रतिस्पर्धा में शामिल हो गये । बाजार के बटवारे के सवाल को ले कर इस शताब्दी के पूर्वार्द्ध में दो विश्वयुद्धों को जन्म दिया ।

इन विश्वयुद्धों के दौरान और इनके बीच के समय में अभूतपूर्व तकनीकी एवं प्रौद्योगिक विकास हुआ । साथ ही विश्व बाजार के प्रबंध की भी नयी तकनीक का विकास हुआ । इन बदली हुई परिस्थितियों में प्रत्यक्ष नियंत्रण का स्थान तकनीकी और वित्तिय नियंत्रण ने ले लिया ।

आधुनिकीकरण या पश्चमीकरण की प्रक्रियाओं पर आधारित 'विकास' की विशिष्ट धारणाएँ उक्त अपरोक्ष नियंत्रण के लिये जमीन तैयार करने लगीं और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का विकास इस नियंत्रण के कारगर अस्त्र की तरह हुआ ।

आज अधिकांश विकासशील देश या तीसरी दुनिया के नाम से पुकारे जाने वाले देश बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के मकड़जाल में फँसे हुए हैं । बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का कार्य क्षेत्र अत्यंत व्यापक है और उद्योगों के कच्चे माल के रूप में इस्तेमाल आने वाले कृषि उत्पादनों से लेकर आणुविक ऊर्जा तक के कार्यक्रमों में इनकी पकड़ है । विकासशील देशों में इन कम्पनियों की गतिविधियाँ कुछ इस प्रकार हैं:

* विकासशील देशों में व्यापक रूप से उपलब्ध अपेक्षाकृत सस्ते मानव श्रम का लाभ उठा कर अपने मुनाफों में बढ़ोतरी करना ।
* छोटे-छोटे देशों के उत्पादन को विकसित देशों के कारखानों की जरूरतों के अनुकूल ढालना और उन्हें अपने यहाँ बने माल के बाजार में परिवर्तित कर देना ।
* पुरानी और निरर्थक हो रही जोखिमपूर्ण तकनीक को विकासशील देशों में हस्तांतरित कर और अधिक समय तक मुनाफे कमाना ।
* विश्व बैंक, आई. बी. आर. डी., आइ. एम. एफ. तथा उनकी सहयोगी अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं में अपने प्रभाव के जरिये विकासशील देशों के नीति निर्धारण पर दबाव डाल कर अपने अनुकूल व्यापार शर्तों को मंजूर करवाना ।

भारत में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की सबसे मजबूत जकड़ दवाईयाँ बनाने के उद्योग में है । इसके अलावा कीटनाशक बनाने वाले उद्योग में बहुराष्ट्रीय कम्पनियों का ही प्रभुत्व है ।

यूनियन कार्बाइड कार्पोरेशन: अमेरिका की बहुराष्ट्रीय कम्पनी

इस कम्पनी के अंतर्गत दुनिया के 37 देशों में लगभग 500 संयंत्र, खानें व कारखाने फैले हुए हैं । सम्पत्ति के मूल्य के आधार पर इस कम्पनी का अमरीका में उन्नीसवाँ नम्बर है ।

इस कम्पनी का ड्राई-सेल बैट्री, एन्टीफ्रीज, प्लास्टिक बैग के उत्पादन में पहला नम्बर है और रासायनिक उद्योगों में तीसरा स्थान है ।

इस कम्पनी का विकास सन् 1886 में शुरु की गई उस कार्बन कम्पनी से हुआ जिसने विश्व की पहला ड्राई सेल बैट्री का निर्माण किया और 'एवरेडी' ट्रेड मार्क को जन्म दिया । सन् 1917 में न्यूयार्क के कुछ साहूकार समूहों ने इस कम्पनी को चार अन्य कम्पनियों के साथ जोड़ कर यूनियन कार्बाइड कार्पोरेशन की नींव डाली ।

जब अमरीका ने प्रथम विश्व युद्ध में प्रवेश किया तो कम्पनी ने धातु कर्म व कार्बन उत्पादन से हट कर गैस व रसायनिक उत्पादन प्रारम्भ कर दिया । द्वितीय विश्वयुद्ध ने यूनियन कार्बाइड को अणु ऊर्जा कार्यक्रम से भी जोड़ दिया ।

इस शताब्दी के छठे व सातवें दशक में यूनियन कार्बाइड को पर्यावरण का दुश्मन नम्बर एक माना जाता था । पर्यावरण के सवाल पर सक्रिय समूहों ने वेस्ट वर्जीनिया (अमेरिका) स्थित लौह मिश्रधातु संयंत्र को विश्व की सर्वाधिक धुँए वाली फैक्टरी घोषित किया था । बाहरी प्रांगण में स्थापित सेन्ट अन्थोनी की मूर्ति को इस फैक्टरी द्वारा उत्पन्न प्रदूषण के खतरों से बचाने के लिये प्लास्टिक के फ्रेम से ढाँकना पड़ा । 'फारचून' नामक पत्रिका ने इसे 'मुनाफे से सम्मोहित प्रतिक्रियावादी नरपिशाच' की संज्ञा दी है । सन् 1979 में 'वाल स्ट्रीट जरनल' ने इसे 'अनर्थक प्रयासों में उलझे मदान्ध दैत्य' के रूप में चित्रित किया था ।

इस कम्पनी की कुल वार्षिक बिक्री दस हजार करोड़ रुपये से भी अधिक है जो कि तमाम छोटे-मोटे देशों के सालाना बजट से भी अधिक है ।

इस कम्पनी का वार्षिक मुनाफा सात सौ करोड़ रुपये है जो भारत के तमाम प्रान्तों के सालाना बजट से अधिक है ।

इस कम्पनी में एक लाख तेरह हजार तीन सौ व्यक्ति काम कर रहे हैं ।

निरर्थक तकनीक के निर्यात का नमूना

वस्तुतः भोपाल में घटी इस भीषणतम औद्योगिक दुर्घटना की जड़ें पुरानी एवं निरर्थक तकनीक के विकासशील देशों पर थोपे जाने की वृहत साजिश में निहित हैं । तीव्र गति से विकसित हो रही तकनीकी जानकारी से विकसित देशों में जोखिम पूर्ण उत्पादन प्रक्रियाएँ पीछे छूटती जा रही हैं । किन्तु अधिकाधिक मुनाफा कमाने के लिये प्रतिबद्ध बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ करोड़ों की लागत से तैयार संयंत्रों को कबाड़ी बाजार भेजने की अपेक्षा विकासशील देशों पर थोपना अधिक लाभदायक समझती हैं । भारत जैसे विकासशील देश अपने विकास की लालसा में बिना कुछ सोचे समझे विकसित देशों द्वारा रद्द तकनीक को गले लगा कर विकास शिखर पर अपनी विजय गाथा के ढोल बजाना चाहते हैं । विकास की इस दौड़ में सिर्फ श्रमिकों व जनसाधारण को ही बलि का बकरा बनना पड़ रहा है ।

अमरीका व यूरोप में मिथाइल आइसोसाइनेट पर आधारित कीटनाशकों के उत्पादन में जिस उत्पादन प्रक्रिया का इस्तेमाल किया जा रहा है उसमें मिथाइल आइसोसाइनेट के पृथक उत्पादन व भण्डारण के लिये कोई स्थान नहीं है । यह प्रचलित उत्पादन प्रणाली दो चरणों की लगातार प्रक्रिया पर आधारित है जो कि पुरानी उत्पादन प्रणाली की अपेक्षा बहुत कम जोखिमपूर्ण है । किन्तु पुरानी प्रणाली के लिये तैयार किये गये भारी भरकम संयंत्रों को बेकार पड़े रहने देना मुनाफाखोर प्रवृत्ति के अनुकूल नहीं है । शायद इसीलिए जोखिम पूर्ण उत्पादन प्रणालियों पर आधारित ऐसे संयंत्र भारत जैसे विकासशील देशों को बेच दिये जाते हैं । भोपाल की दर्दनाक घटना इस प्रकार के तकनीकी हस्तांतरण में निहित जोखिमों का एक छोटा सा नमूना मात्र है ।

भारत में ऐसा ही एक और उदाहरण एसबेस्टोस सिमेंट के उत्पादन के लिये तकनीकी हस्तांतरण का है । ऐसबेस्टोस के उत्पादन से सम्बंधित श्रमिकों व आसपास की जनसंख्या पर पड़ने वाले इसके दुष्परिणामों को देखते हुए अमरीका व यूरोप में इसके उत्पादन पर पूर्ण प्रतिबन्ध लगा दिया गया है । इस प्रतिबंध के प्रभावी होते ही एसबेस्टोस सिमेंट उत्पादन का तकनीकी हस्तांतरण तेजी के साथ विकासशील देशों में होने लगा और आज सिर्फ भारत में ही एसबेस्टोस के दसियों कारखाने तीव्र गति से कार्य कर रहे हैं और मानव जीवन को भीषण क्षति पहुँचा रहे हैं ।

प्रतिवर्ष भारत पश्चिमी देशों से 400 करोड़ रुपए तकनीकी हस्तांतरण पर खर्च कर रहा है ।

क्या हम निरर्थक तकनीक का ही आयात कर रहे हैं ?

विश्व की अन्य प्रमुख औद्योगिक दुर्घटनाएँ

* सितम्बर, 1921: फ्रैंकफर्ट से 50 मील दक्षिण में जर्मनी के इतिहास की सबसे बड़ी औद्योगिक दुर्घटना उस समय घटी जब श्रमिक एक भण्डार में 4000 टन अमोनिया नाइट्रेट उर्वरक के शिलाखण्ड को डाटनामाइट की मदद से तोड़ रहे थे । इस दुर्घटना में 561 लोगों की मृत्यु हुई तथा मीलों तक मकान गिर गये ।
* सन् 1942: होनरिको कोयला खान में विस्फोट होने से चीन में एक हजार पाँच सौ मजदूरों की मृत्यु हो गयी ।

* अक्तूबर, 1944: क्लीवलैण्ड में ईस्ट ओहियो गैस कं. के तरल प्राकृतिक गैस के टैंक में विस्फोट होने से 131 व्यक्तियों की मृत्यु हो गयी ।

* अप्रैल, 1947: अमेरिका के टैक्सास सिटी में 1400 टन अमोनिया नाइट्रेट उर्वरक सहित गैलवेस्टन खाड़ी में विश्राम कर रहे 'ग्रैंड कैम्प' नामक मालवाहक जहाज में आग लग जाने से भीषण विस्फोट हुआ । आग की लपटें लगभग 700 फीट तक फैली और पास के मोनसैन्टो प्लांट ने भी आग पकड़ ली । स्टीरीन व अप्राकृतिक रबड़ बनाने वाले इस प्लांट के भीषण विस्फोट ने सारे शहर में आग छितरा दी । नाइट्रेट से लदा हुआ 'हाई प्लेयर' नामक जहाज जो पास ही खड़ा था, आग की लपेट में आ गया और उसमें भी भीषण विस्फोट हुआ । इस दुर्घटना में 576 लोगों की मृत्यु हो गई और 2000 लोग गम्भीरता पूर्वक घायल हो गये ।

* जुलाई, 1948: जर्मनी में आई. जी. फारबन केमिकल प्लांट के लिये डाई मिथाइल इथर ले जा रहे वाहन में फैक्टरी गेट के अन्दर घुसते ही विस्फोट हो गया जिससे 207 व्यक्तियों की मृत्यु हो गई तथा 4000 अन्य घायल हो गये ।

* सन् 1956: कोलम्बिया में डायनामाइट ट्रक में हुए विस्फोट में ग्यारह सौ लोगों की मृत्यु हो गयी ।

* जून, 1974: इंग्लैण्ड में शान्तिकाल का सबसे भीषण विस्फोट नीप्रो (यू. के.) लि. रासायनिक संयंत्र में हुआ । इस संयंत्र में कैप्रोलेक्टम का उत्पादन होता है जिससे नायलोन बनाया जाता है । इस विस्फोट में 28 मजदूरों की मृत्यु हो गयी तथा 60 एकड़ क्षेत्र की सभी इमारतें मिट्टी में मिल गयीं ।

* सन् 1975: भारतवर्ष में चासनाला कोयला खानों में हुई दुर्घटना में 431 मजदूरों की मृत्यु हो गयी ।

* जुलाई, 1976: इटली में सेवेसो स्थित हाफमैन लारोशे प्लांट से विषाक्त डाइआक्सिन के लीक हो कर वातावरण में मिल जाने के कारण चार हजार पाँच सौ एकड़ का क्षेत्र प्रभावित हो गया । एक हजार से अधिक निवासियों को अपनी जान बचाने के लिये भागना पड़ा और तमाम बच्चों की त्वचा में विकार उत्पन्न हो गये ।

* जुलाई, 1978: स्पेन में प्रोपीलीन गैस के एक ओवर लोडेड ट्रक के उलट जाने से उसमें आग लग गयी और लगभग 100 फीट ऊँची लपटें निकल कर उस क्षेत्र में फैल गयीं जहाँ लगभग 780 पर्यटक मौज मस्ती कर रहे थे । इस दुर्घटना में 215 लोगों की मृत्यु हो गयी ।

* फरवरी, 1984: दक्षिण पूर्व ब्राजील में पाइपलाइन से गैसोलीन लीक होने से हुए भीषण अग्निकाण्ड में कम से कम पाँच सौ लोगों की मृत्यु हो गयी ।

* नवम्बर, 1984: मैक्सिको की भीषणतम् औद्योगिक दुर्घटना सरकारी पैट्रोलिओस मैम्सीकसनोस् की भण्डारण सुविधाओं में तरल गैस के टैंक फटने के कारण हुई । इस दुर्घटना में 452 लोग मारे गये तथा 4228 लोग बुरी तरह घायल हुए हैं । लगभग एक हजार लोग अब भी लापता हैं ।

कृषि विकास नीति की दुविधाएँ

भोपाल की विनाशलीला हमें अपनी विकास नीति के क्रियान्वन के भीतर निहित मूल्यों को पुनः आँकने पर मजबूर करती है । स्वतंत्रता के बाद कृषि उत्पादन में आत्म निर्भरता प्राप्त करने की दिशा में हमारे तत्काल फल प्राप्त करने के उतावलेपन ने एक ऐसे भ्रामक जाल में फँसा दिया है जिससे हमें न तो वास्तविक आत्मनिर्भरता ही प्राप्त हुई है और न ही हम सामाजिक न्याय के अपने निहित उद्देश्य की ओर बढ़ सके हैं ।

तेजी से बढ़ते औद्योगीकरण और शहरीकरण की जरूरतें पूरी करने के उद्देश्य से कृषि उत्पादन में अपेक्षित बढ़ोत्तरी के लिये हमारे नियोजकों ने अमरीकी व पश्चिमी सलाहकारों के प्रभाव में आकर भूमि के न्याय-संगत बँटवारे के स्थान पर उन्नत बीजों, रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशक व खर-पतवार नाशक रसायनों के प्रचलन के माध्यम से कृषि उत्पादन बढ़ाने का रास्ता चुना । सन् 1947 में 'अधिक अन्न उपजाओ' अभियान तथा सन् 1950-52 में एलबर्ट मेयर के 'सामुदायिक विकास' के प्रयास इसी का नतीजा थे ।

रासायनिक खादों, कीट नाशकों व खर-पतवार नाशकों के बड़ी मात्रा में झोंक दिये जाने से कृषि उत्पादन में तत्काल वृद्धि हुई और कृषि उत्पादन के आँकड़े राष्ट्रीय स्वाभिमान की दृष्टि से अत्यंत गौरवपूर्ण लगने लगे । किन्तु इससे कितनी आत्मनिर्भरता अर्जित हुई यह विवादास्पद है । क्योंकि रासायनिक उर्वरक व कीट नाशकों के उत्पादन के सवाल पर तकनीकी हस्तांतरण व उनके आयात को लेकर हम अमरीका व यूरोप के मोहताज हो गये ।

दूसरी ओर रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों की बैशाखी पर आयी इस हरित क्रांति ने भूमि वितरण की विषमताओं को और भी विकराल कर दिया है । उक्त कार्यनीति पर आधारित हरित क्रांति के हल्कों में भूमि हीनता में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई है । पंजाब इसका जीता जागता उदाहरण है जहाँ हरित क्रांति के फलस्वरूप भूमिहीनता बढ़ कर 50 प्र.श. से भी अधिक हो गयी है ।

धीरे-धीरे यह बात भी उभर कर आई है कि इन उर्वरकों और कीटनाशकों के अत्यधिक इस्तेमाल से लम्बे अरसे में भूमि का उपजाऊपन भी कम होता जा रहा है । और कम होते उपजाऊपन को पूरा करने के लिए और तीव्र रसायनों का प्रयोग कर हम इस दुष्चक्र में फँसते जा रहे हैं ।

अतः स्पष्ट है कि विकास की प्रचलित कार्यनीति न सिर्फ जोखिमपूर्ण रासायनिक उत्पादन प्रक्रियाओं को निमंत्रण दे रही है अपितु हमें सामाजिक न्याय की घोषित नीति से भी दूर कर रही है ।

कीटनाशकों का जोखिम भरा विज्ञान

पिछले दो दशकों से कीटनाशकों के प्रचलन में निरंतर वृद्धि हुई है । सभी कीटनाशकों का उत्पादन विषाक्त रसायनों के माध्यम से ही होता है । कीटनाशकों की कहानी अपने उत्पादन से लेकर इस्तेमाल और इस्तेमाल के प्रभावों तक अत्यंत जोखिमपूर्ण है ।

इन्टरनेशनल डेवलपमेन्ट रिसर्च सेन्टर, ओटावा, की एक रिपोर्ट के अनुसार कीटनाशकों की विषाक्तता के सात लाख पचास हजार मसले प्रतिवर्ष प्रकाश में आते हैं और इनमें आधे से अधिक विकासशील देशों में ही होते हैं । विकासशील देशों में ही लगभग 10 हजार लोग कीटनाशकों की विषाक्तता के कारण मृत्यु का शिकार हो जाते हैं । तीसरी दुनिया के इन देशों में कीटनाशकों के प्रभाव से होने वाली मौतों की संख्या, स्थानीय रोगों से होने वाली मौतों की अपेक्षा कहीं आगे बढ़ गयी है ।

कीटनाशकों की उत्पादन प्रक्रिया विषाक्त रसायनों से सम्बद्ध होने के कारण उत्पादन कार्य में संलग्न श्रमिकों की कार्य दशाएँ अत्यन्त जोखिमपूर्ण होती हैं और साथ ही उत्पादन केन्द्र के आस-पास की आबादी के लिये सदैव खतरा बना रहता है । इन्डस्ट्रियल टाक्सोलोजी रिसर्च सेन्टर, लखनऊ तथा के.जी. मेडिकल कालेज लखनऊ के संयुक्त अध्ययन में कीटनाशक उत्पादन के कार्य में लगे श्रमिकों में से तीन चौथाई श्रमिकों में विषाक्तता का प्रभाव पाया गया तथा एक तिहाई से अधिक में हृदय व उदर सम्बंधी विकार पाये गये ।

खतरनाक कीटनाशक अभी भी इस्तेमाल

जोखिम के कारण अमेरिका और इंग्लैंड जैसे देशों में जिनके उत्पादन या इस्तेमाल पर प्रतिबंध लगा हुआ है ऐसे कई कीटनाशक अभी भी हमारे देश में इस्तेमाल हो रहे हैं ।

* **डी.डी.टी.** – हर वर्ष चौदह हजार टन
* **बी.एच.सी.** – हर वर्ष इक्तालीस हजार टन
* **एम. पेराथियोन** – हर वर्ष चौदह हजार टन

आखिर ऐसा क्यों ?

लम्बे समय तक कीटनाशकों का प्रयोग करने वाले किसान इनमें मिश्रित विषाक्त रसायनों के निरन्तर सम्पर्क में रहते हैं । विभिन्न माध्यमों से उनका शरीर इनमें निहित तत्वों की सूक्ष्म मात्रा लगातार ग्रहण करता रहता है । लगातार ग्रहण किये गये रासायनिक तत्वों की संयुक्त खुराक एक अन्तराल के बाद नुकसान पहुँचाती है । आई.टी.आर.सी., लखनऊ व के.जी. मेडिकल कालेज के उक्त अध्ययन में ही पाया गया कि कीटनाशकों के सम्पर्क में आने वाले कृषकों में से 20 प्र.श. को माँसपेशियों में शिथिलता के परिणाम स्वरूप दृष्टि ह्रास का सामना करना पड़ रहा है ।

जिन फसलों पर कीटनाशकों का प्रयोग किया जाता है उनमें भी प्रदूषण का खतरा बराबर बना रहता है । कीटनाशकों के व्यापक प्रयोग के कारण पूरी की पूरी फसल के विषाक्त हो जाने की घटनाएँ भी प्रकाश में आने लगी हैं । इंडियन एग्रीकल्चरल रिसर्च इन्सटीट्यूट, नई दिल्ली की एक रिपोर्ट में विभिन्न खाद्यानों में डी.डी.टी. के अवशेषों की मौजूदगी का हवाला दिया गया है । इसके अनुसार गेहूँ में 1.6 से 17.4 पी.पी.एम. (कण प्रति दस लाख कण); धान में 0.8 से 16.4 पी.पी.एम; सब्जियों में 5 पी. पी. एम. तथा आलू में 68.5 पी. पी. एम. डी. डी. टी. पाया गया ।

इस्तेमाल और फिर खाद्य सामग्री में – सभी कहीं कीटनाशक अपना ख़तरनाक प्रभाव छोड़ रहे हैं ।

आखिर इनकी इतनी क्या आवश्यकता है ?

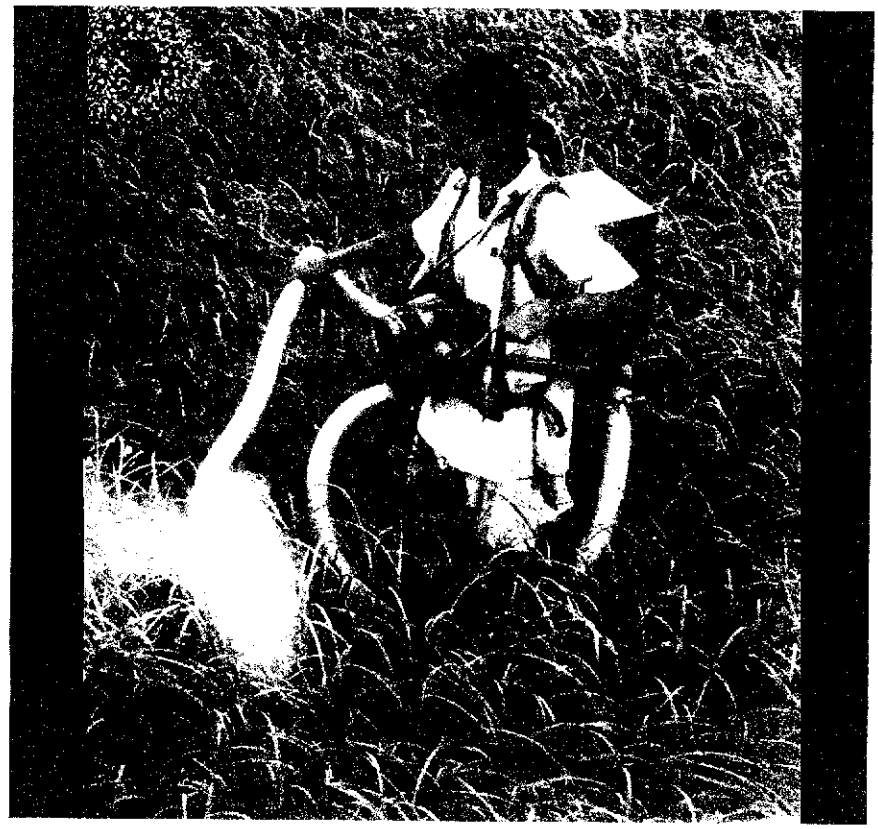

हम क्या कर सकते हैं ?

इस भीषण दुर्घटना और उससे जुड़ी तमाम बातों को पढ़ कर हमारे सामने अनेक सवाल खड़े होते हैं। इनमें से कई सवाल एक दूसरे से जुड़े हैं और कई इतने बीहड़ की हम उन्हें सुलझाने में स्वयं को दुर्बल मान बैठते हैं। निश्चित है कि इन मामलों पर सामूहिक जन आंदोलन खड़ा करके ही इनका दूरगामी निदान सम्भव है। निम्नलिखित प्रमुख मसले हमारे लिए शुरुआत कर सकते हैं :

* इस पूरे हादसे से और उसके बाद के सरकारी रवैये से एक बात साफ हो जाती है: आम आदमी-औरत को बिल्कुल भी जानकारी नहीं थी और न ही अब है। भोपाल के कारखाने में काम

देश में जोखिमपूर्ण उद्योग कौन-कौन से हैं ?

अनेकों उद्योगों में उत्पादन की प्रक्रिया के साथ या उसके बाद विषपूर्ण पदार्थ जुड़े हुए हैं। इनमें से मुख्य उद्योग निम्न हैं:

* कीटनाशक उत्पादन
* नाइट्रोजन तथा फास्फोरस के आधार पर उर्वरक उत्पादन
* रंग और पेंट बनाने वाले प्लांट
* कोयले से बिजली बनाने वाले उद्योग
* तरह-तरह के रसायन बनाने वाले उद्योग
* ताँबा, जस्ता, अल्युमिनियम, ज़िंक आदि धातु पैदा करने वाले कारखाने
* कागज़ बनाने वाले उद्योग
* दवाई बनाने वाले उद्योग
* चमड़े की टेनरी
* सूती मिलें
* पेट्रोकेमिकल कारखाने
* सिमेंट के कारखाने (एसबेस्टोस सीमेन्ट फैक्ट्री सहित)
* लोहा और स्टील बनाने वाले उद्योग
* स्लेट पेन्सिल उद्योग

इस तरह से सूची बहुत लम्बी है।

क्या आप भी इसी तरह के उद्योगों में काम करते हैं ? क्या आपके घर के आस-पास इस तरह के कारखाने लगे हुए हैं ? कभी उनके खतरों के बारे में सोचा है आपने ?

करने वाले श्रमिकों और आसपास रहने वाले लोगों को कभी भी मिथाइल आइसो साइनेट के खतरों से आगाह नहीं किया गया । गैस रिसन के बाद भी घंटों तक सही जानकारी नहीं दी गई । अभी भी यह स्थापित नहीं हुआ है कि गैस क्यों और कैसे निकली ।

भोपाल या देश के अन्य भागों में डाक्टरों को भी इस गैस के भयावह परिणामों से जूझने की न तो कोई जानकारी है और न ही ट्रेनिंग । ऊपरी उपचार कर दिए गए, पर वैज्ञानिक जानकारी के आधार पर नहीं । उसका एक कारण तो यह है कि देश में किसी को भी इस गैस के खतरों और प्रभावों से निपटने की पूर्ण जानकारी नहीं है ।

भोपाल के इस कारखाने में हुई पुरानी घटनाओं के बाद सरकार के फैक्टरी इंस्पेक्टर तथा प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड द्वारा की गई जाँचों की रिपोर्टें भी प्रकाश में नहीं आई हैं । उन जाँचों के बाद सरकारी स्तर पर हुई कार्यवाही की भी कोई जानकारी आम जनता को नहीं दी गई ।

इन सबको देखते हुए क्या हम **जानकारी के अपने मौलिक अधिकार की माँग** नहीं उठा सकते ? क्या देश में इस तरह के खतरनाक कारखानों और रसायनों के निर्माण की प्रक्रिया की जानकारी श्रमिकों एवं आम जनता को नहीं दी जानी चाहिए ? क्या फैक्टरी इंस्पेक्टर की जाँच रिपोर्ट की एक कापी श्रमिकों को मिलने का अधिकार नहीं है ? क्या प्रदूषण नियंत्रण बोर्डों की जाँच रिपोर्टों को आम जनता तक पहुँचने का हक नहीं बनता ? क्या जोखिम भरे कारखानों के निर्माण और प्रक्रियाओं के इस्तेमाल के पहले स्थानीय जनता को खुलकर चर्चा में शामिल नहीं किया जाना चाहिए ? क्या फैक्टरी एक्ट के तहत किए जानी वाली डाक्टरी जाँच की रिपोर्ट श्रमिकों को नहीं मिलनी चाहिए ? क्या श्रमिक या जनता के संगठन किसी कारखाने विशेष की जाँच कराने की माँग करने का अधिकार नहीं रखते ?

यदि हम जानकारी के इस मौलिक अधिकार का महत्व समझते हैं तो हमें सामूहिक तौर पर इसकी माँग उठानी पड़ेगी । अमेरिका जैसे विकसित देशों में आम नागरिक को इस तरह के अधिकार प्राप्त हैं । क्या हमारे गरीब देश में इस तरह के अधिकार दिलाने वाला कानून नहीं बनाया जा सकता ? **पर इस दिशा में पहल हमें ही करनी पड़ेगी ।**

* इसके साथ ही जुड़ा हुआ प्रश्न विज्ञान का है । यदि हम गौर से देखें तो ज्ञान और विज्ञान की सभी सुविधाएँ मुनाफा बढ़ाने और सत्ता को समर्थन देने में लगी रहती हैं । शोधकर्ता, वैज्ञानिक, उपकरण तथा अन्य संसाधन, कुल मिलाकर कम्पनी के मालिकों या सरकार के कब्जे में हैं । हमारे देश में हर तरह की सक्षम शोध संस्थाएँ, प्रयोगशालाएँ और वैज्ञानिक शोधकर्ता हैं । पर अधिकांश सरकारी संस्थानों या निजी कम्पनियों के नियंत्रण में हैं ।

इसका बुरा परिणाम भोपाल की दुर्घटना से साफ जाहिर हो गया । गैस कहाँ से निकली, क्यों निकली, उसके प्रभाव, उन प्रभावों की चिकित्सा – सभी के लिए सरकार व कम्पनियों के नियंत्रण में रहने वाले वैज्ञानिकों और शोधकर्ताओं के उत्तर ही मिले । यदि गैस का लोगों और अन्य जीवधारियों पर पड़े प्रभाव की जाँच होती है, तो सारे उपकरण, वैज्ञानिक, विशेषज्ञ आदि सरकार या कम्पनियों के ही हैं । यदि प्रभावित लोगों की डाक्टरी जाँच करनी है, तो भी वही । यदि कारखाने में स्थित उत्पादन प्रणाली और सुरक्षा संयंत्रों की परख होनी है तो भी वही ।

जन साधारण का ज्ञान-विज्ञान की विधा, प्रणाली, साधनों और उपयोगों पर कोई नियंत्रण नहीं है । क्या यह सम्भव नहीं कि आम लोगों को वैज्ञानिक और साधन उपलब्ध हों जिससे वह अपने हित में ज्ञान-विज्ञान का उपयोग कर सकें ? क्या यह संभव नहीं कि सरकार और कम्पनियों की विज्ञान पर इस इकतरफा जकड़ को हम सब मिलकर ढीला करें और आम लोगों के नियंत्रण को बढ़ावा दें ? क्या यह संभव है कि देश के तमाम मजदूर संगठन मिलकर एक ऐसे केंद्र की स्थापना करें जहाँ उद्योगों के खतरों की पूर्ण जानकारी और जाँच हो तथा जो आम मजदूर को लगातार आगाह करता रहे ? यदि अन्य देशों के मजदूर संगठन ऐसा कर सकते हैं तो सम्भवतः हम भी । **पहल कौन करेगा ?**

* भोपाल की दुर्घटना ने साफ जाहिर कर दिया है कि फैक्टरी इंस्पेक्टर और प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड कमजोर हो गए हैं । नहीं तो उनके द्वारा की गई कानूनी जाँच यूनियन कार्बाइड के कारखाने को इस दुर्घटना के पहले ही दुरुस्त न कर देती ? इस कमजोरी को दूर करने के कई उपाय संभव हैं ।

पहला, देश में **औद्योगिक स्वास्थ्य और सुरक्षा पर कोई समग्र कानून** नहीं है । इसके बिना हमारे पुराने कानून 'मिक' जैसी घातक गैस को पहचान भी नहीं सकते । आज आवश्यकता इस बात की है कि इस मुद्दे पर एक समग्र कानून बनाया जाए जिसमें श्रमिकों के हकों को पूर्ण मान्यता मिले । अनेक विकसित देशों में इस तरह के मजबूत कानून बने हुए हैं और उनके अंतर्गत कारखानों की पूर्ण जाँच और उसकी अवहेलना पर भारी दंड की व्यवस्था है । इन्हीं के तहत विकसित देशों में सरकार के खर्चे पर प्रति वर्ष हजारों श्रमिकों को स्वास्थ्य और सुरक्षा की ट्रेनिंग उनके संगठनों के माध्यम से दी जाती है । इस तरह वहाँ आम श्रमिक में इन मुद्दों पर जागरुकता और उन पर निगरानी रखने की क्षमता पैदा हो गई है । क्या अपने देश में यह सम्भव नहीं है ? क्या हमारे श्रमिक अपने इस अधिकार की माँग के लिए आंदोलन नहीं कर सकते ?

दूसरा, इन जाँच और नियंत्रण करने वाली संस्थाओं में प्रशिक्षित लोगों की बेहद कमी है । भोपाल के फैक्टरी इंस्पेकटरेट में किसी ने 'मिक' का नाम नहीं सुना था । साथ ही, सुचारू जाँच के लिए आवश्यक संख्या में लोग और उपकरणों की भी भारी कमी है । यदि एक फैक्टरी इंस्पेक्टर एक हजार कारखानों की निगरानी करेगा और यदि प्रांतीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड का एक वैज्ञानिक सैकड़ों स्थानों पर वायु और पानी के प्रदूषण की जाँच का जिम्मेदार रहेगा तो क्या सही ढंग से जाँच हो पाएगी ? यदि हम

क्या कानून हैं ?

गौर से देखा जाए तो भोपाल दुर्घटना जैसी परिस्थितियों के लिए सही कानून ही देश में नहीं बने हैं । फिर भी, कई निम्नलिखित कानूनों के तहत थोड़ी बहुत कार्यवाही संभव है :

* फैक्टरी एक्ट, 1948 के अंतर्गत कारखाने के अंदर सुरक्षा की समुचित व्यवस्था के प्रावधान हैं और फैक्टरी इंस्पेक्टर निगरानी हेतु नियुक्त हैं ।

* इंसेक्टिसाइड एक्ट 1968 के तहत कीटनाशकों के निर्माण और इस्तेमाल के पहले उनका पंजीकरण आवश्यक है । पंजीकरण के लिए उनकी सुरक्षा और विषाक्तता तथा उसके प्रभावों के उपचारों की जानकारी देना अनिवार्य है । इसके तहत इंसेक्टीसाइड इंसपैक्टरों को निगरानी हेतु नियुक्त किया गया है ।

* जल प्रदूषण नियंत्रण एक्ट 1974 तथा वायु प्रदूषण नियंत्रण एक्ट 1981 के अंतर्गत सुरक्षित जल और हवा बनाए रखने की व्यवस्था है और लगातार निगरानी रखने का प्रावधान है ।

हम जानते ही हैं कि यह कानून न तो सही तरह क्रियान्वित होते हैं और न ही इनमें स्थापित दंड इतने बड़े हैं कि बड़ी-बड़ी कम्पनियाँ इसकी परवाह ही करती हैं ।

इन जाँच संस्थाओं को उनकी सही भूमिका अदा करने देना चाहते हैं तो इन बातों पर भी दबाव डालना होगा ।

तीसरा, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के विकासशील देशों में जोखिम भरे कारखाने लगाने के पीछे हमारे देशों में स्थापित ढ़ीले कानून और हल्के-फुल्के मानदंड हैं । जो काम यह कम्पनियाँ विकसित देशों में नहीं कर सकतीं, वह हमारे देश में कानूनी तौर पर कर सकती हैं । क्या हमारे देश में लोगों के जीवन का मूल्य विकसित देशों के लोगों के जीवन के मूल्य से कम है ? क्या हम भी उन्हीं स्तर के मानदंडों को अपने यहाँ स्थापित करके उनका कड़ाई से पालन नहीं कर सकते ? इसके लिए भी आवाज़ उठानी पड़ेगी और दबाव डालना पड़ेगा । **क्या हम तैय्यार हैं ?**

* इस तरह के जोखिम भरे कारखानों को लगाने के पहले **सुरक्षा पर पूरा ध्यान नहीं** दिया जाता । कुछ नियम ऐसे हैं जो यह सुझाते हैं कि खतरनाक कारखानों को शहरी आबादी से दूर रखा जाना चाहिए । इस तरह से उनके ख़तरों से कम लोग प्रभावित होने की संभावना है ।

पर हमारे देश में कारखाने या किसी भी अन्य व्यापारी दफ्तर के आस-पास अनेक लोग आकर रहने लगते हैं । काम की तलाश में गरीब लोग किसी भी तरह का काम करने के लिए इन कारखानों के इर्द-गिर्द ही अपनी झोपड़ियाँ डाल देते हैं । और फिर अनेक श्रमिक भी कारखानों के आस-पास ही रहते हैं क्योंकि यातायात के साधन अपने देश में न तो इतने विकसित हैं और न सस्ते ही ।

अतः यह सोचना कि दूर-दराज, सुनसान जगह पर कारखाने लगाने से ख़तरा कम होगा, गलत ही लगता है । कारखाना जहाँ भी लगेगा, लोग उसके आस-पास बसने ही लगेंगे ।

फिर दूर-दराज, कम आबादी वाले क्षेत्रों में कारखाना लगने से उन क्षेत्रों की गरीब ग्रामीण जनता तो इस ख़तरे से नहीं बच सकती । साथ ही, सुदूर, अनदेखी जगह पर स्थित यह कारखाने हवा और वायु के

प्रदूषण की रत्ती भर भी परवाह नहीं करेंगे क्योंकि उन पर निगरानी रखने वाला कोई नहीं होगा ।

इन सबके बजाय क्यों न खतरनाक पदार्थों और प्रक्रियाओं वाले उद्योगों पर ही प्रतिबंध लगा दिया जाए ? हम उन उद्योगों और तकनीकों को क्यों इस्तेमाल करें जिन्हें विकसित देश तिरस्कृत कर चुके हैं ? क्या यह सम्भव नहीं कि जोखिमपूर्ण उद्योग की स्थापना का लाइसेंस देने के पूर्व ही सुरक्षा की पूरी और कड़ी व्यवस्था अनिवार्य कर दी जाए ? **इसके लिए सामूहिक पहल जरूरी होगी** ।

* भोपाल की इस दुर्घटना ने हमें चौंका दिया है । पर इसके पहले और आज भी इस तरह की छोटी-छोटी वारदातें हुई हैं और हो रही हैं । गंगा का पानी प्रदूषित है; शहरों में साँस लेना दुर्भर है; बिजली बनाने के कारखाने बस्तियों पर कालिख बरसा रहे हैं; उर्वरक और कीटनाशक का इस्तेमाल करने वाले किसान और मजदूर बीमार हो रहे हैं; थ्रेशर पर फसल काटने वाले मजदूरों के हाथ कट रहे हैं; कारखानों में चोटें आ रही हैं; खानों में मजदूर दब रहे हैं; चिमनियाँ जहर उगल रही हैं । दूसरी तरफ नई तकनीक देश में लाई जा रही है, कंप्यूटर लग रहे हैं और विशालकाय कारखाने लगाए जा रहे हैं । इसके साथ ही गरीब किसान, हरिजन और आदिवासी भूमिहीन हो रहे हैं; बड़े-बड़े बाँधों से सिंचाई और बिजली पैदा करने के कारण हजारों परिवार विस्थापित हो रहे हैं; शहरों में भीड़ बढ़ रही है; पहाड़ नंगे हो रहे हैं; बेतहाशा काटे गए पेड़ों की वजह से बाढ़ और भूस्खलन की तादाद बढ़ गई है । ऐसा लगता है कि 'सामाजिक न्याय के साथ विकास' के सिद्धान्त को पूर्णतः भुला दिया गया है ।

  यह सारी स्थिति देश में लागू की जाने वाली **विकास की पद्धति** से पैदा हो रही है । इस पूरी प्रणाली पर हमें फिर से विचार करना होगा । क्या ऐसे तरीके हम खोज सकते हैं जिससे विकास के इन दुष्परिणामों को कम किया जा सके ? क्या नए रसायनों और कारखानों को देश में लाने से पहले उनकी सुरक्षा की पूर्ण क्षमता और समझ हासिल की जा सकती है ? क्या बिजली के उत्पादन के लिए विस्थापितों के हितों को ध्यान में रखा जा सकता है ? क्या चिमनियों के जहर को हटाया जा सकता है ?

  यदि हम सामूहिक रूप से इस गंभीर प्रश्न पर चर्चा करें तो सम्भवतः उपाय निकलेंगें । सम्भवतः हमारी विकास की प्रणाली हमारे सामूहिक हितों से जुड़ सकेगी । सम्भवतः हमें अपनी तरक्की के लिए दुबारा भोपाल की दुर्घटना दोहरानी नहीं पड़ेगी ।

  क्या हम शुरुआत करने के लिए तैय्यार हैं ?

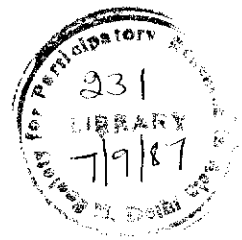

प्रिया
45 सैनिक फार्म, खानपुर, नई दिल्ली - 110062

वर्क बेंच के सहयोग से प्रकाशित

हमारे बारे में

सोसाइटी फॉर पार्टिसिपेटरी रिसर्च इन एशिया (संक्षेप में 'प्रिया') नई दिल्ली स्थापित एक स्वयंसेवी संस्था है। संस्था का मुख्य उद्देश्य स्थानीय संगठनों और समूहों के साथ जुड़कर गरीब लोगों द्वारा अपने वर्गीय हितों में चलाए जा रहे संगठनों और आंदोलनों को एक छोटी-सी मदद पहुंचाना है। 'प्रिया' यह मदद प्रशिक्षण, अनुसंधान, मूल्यांकन और शैक्षणिक सामग्री की तैयारी के माध्यम से करती है। हमारी संस्था में दस से कम लोग हैं और देश के अन्य भागों में स्थानीय लोगों से मिलकर ही हम काम करते हैं।

पिछले तीन वर्षों में प्रिया ने प्रौढ़ शिक्षा, वनवासी और वन-विनाश, भूमि हस्तांतरण, औद्योगिक स्वास्थ्य, आदि विषयों पर मुख्य रूप से ध्यान दिया है। इसके अलावा अनेक स्थानों पर स्थानीय विषयों को लेकर कार्यशालाएं तथा प्रशिक्षण के कार्यक्रम भी आयोजित किये गये हैं।

इस रिपोर्ट को अनिल चौधरी और राजेश टंडन ने तैयार किया है। विज्ञान और पर्यावरण केंद्र के साथि

जनवरी 1985